अपने किसी कर्म से दूसरों को पीड़ित अथवा व्याकुल न करने का नाम **अहिंसा** है। राजनीतिज्ञों, समाजवादियों, परोपकारियों की लौकिक क्रियाएँ इसीलिए कल्याणकारी सिद्ध नहीं होतीं, क्योंकि वे आत्म-दृष्टि से विहीन हैं। वे तो वास्तव में यह जानते ही नहीं कि मानवसमाज के लिये वास्तव में क्या कल्याणकारी है और क्या नहीं। **अहिंसा** सिद्धान्त का अभिप्राय जनता को इस रीति से सिखाना है, जिससे मानव शरीर का सब प्रकार सदुपयोग हो सके। मानव देह का एकमात्र उद्देश्य भगवत्प्राप्ति करना है। अतएव जिन कार्य-कलापों से इस लक्ष्य की दिशा में उन्नति न हो, वे सब मानव-देह की हिंसा करते हैं। अहिंसा तो वह साधना है, जिससे जनसाधारण के लिये भावी आध्यात्मिक सुख हो।

समता का अर्थ राग-द्वेष से मुक्ति है। न गाढ़ राग अच्छा है और न अत्यधिक द्वेष होना ही उत्तम है। इस प्राकृत-जगत् में राग और द्वेष, दोनों ही से मुक्त रहना सर्वोत्तम नीति है। कृष्णभावना के अनुकूल प्राणी-पदार्थों को अंगीकार कर लेना और इसके प्रतिकूल सम्पूर्ण वस्तुओं को त्याग देना—इसी का नाम **समता** है। कृष्णभावनाभावित पुरुष किसी भी वस्तु का ग्रहण-त्याग स्वेच्छा से नहीं करता; वह वस्तु कृष्णभावना के अनुकूल है अथवा प्रतिकूल है—इसके आधार पर ही उसे अपनाता या त्यागता है।

तुष्टिः अर्थात् सन्तोष का तात्पर्य है कि अनर्थकारी क्रियाओं के द्वारा अधिकाधिक विषयभोग जोड़ने का लोभ न करे। भगवत्कृपा से जो कुछ मिले, उसी में सन्तोष का अनुभव करना चाहिए। **तपः** के सम्बन्ध में वेदों में अनेक विधि-विधान हैं, जैसे ब्राह्ममुहूर्त में शयन-त्याग, स्नान करना, इत्यादि। ब्राह्ममुहूर्त में निद्रा-त्याग करने में कभी-कभी अतीव कष्ट सा होता है। इस प्रकार के कष्टों को स्वेच्छापूर्वक सहन करना तप है। इसी प्रकार, कुछ दिवसों में उपवास रखने का विधान है। इच्छा न होने पर भी कृष्णभावना में प्रगति के दृढ उद्देश्य को लेकर उपवास जैसे शास्त्र-विहित शारीरिक कष्टों को प्रसन्नता के साथ सहन करना चाहिये। परंतु ऐसा उपवास करना ठीक नहीं, जो निष्प्रयोजन हो अथवा जो वेदविरुद्ध हो, जैसे किसी राजनीतिक उद्देश्य के लिए उपवास करना। भगवद्गीता में इस प्रकार के व्रत को तामसी कहा गया है। यह सिद्धान्त है कि तामसी अथवा राजसी कर्म से पारमार्थिक उन्नति नहीं हो सकती। एकमात्र सात्त्विक कर्मों से ही उन्नति होती है। वैदिक विधान के अनुसार उपवास करना ज्ञान के विकास में विशेष सहायक है।

दानः के सम्बन्ध में शास्त्र की आज्ञा है कि आय का आधा भाग सत्कार्य में लगाना चाहिए। कृष्णभावनाभावित कर्म ही यथार्थ सत्कर्म है—वास्तव में सर्वोत्तम है। श्रीकृष्ण सत्स्वरूप हैं, इसलिए उनका निमित्त भी सत्स्वरूप है। अतएव दान कृष्णभावना-परायण मनुष्य को करना चाहिए। वैदिक शास्त्रों के अनुसार, ब्राह्मण दान के पात्र हैं। यह परिपाटी आज भी प्रचलित है, यद्यपि इसका स्वरूप वैदिक-विधान से प्रायः भ्रष्ट हो गया है। फिर भी, विधान है कि दान ब्राह्मणों को